International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 02-11-2019; Accepted: 05-1-2019
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 1; January 2020; Page No. 06-07

हिंदी उपन्यासों में चित्रित आदिवासी विद्रोह

सतीश चंद्र सि
पीएचडी शोधार्थी, हिंदी विभाग तमिलनाडु केंद्रीय विश्वविद्यालय, तिरूवारुर, तमिलनाडु, भारत

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के इतिहास में गद्य साहित्य के विकास के साथ ही उपन्यास का आरंभ होता है। गद्य के विकास में उपन्यास का महत्वपूर्ण स्थान है। हिंदी साहित्य में आदिवासी लेखन का आरंभ नवें दशक से माना जाता है, जिसमें कविता, कहानी, उपन्यास आदि प्रमुख हैं। आजादी के पूर्व आदिवासियों पर बहुत कम लिखा गया था और जितना भी लिखा गया था वह सब गैर आदिवासी लेखकों द्वारा लिखा गया था। आदिवासियों द्वारा न लिखने का कारण अशिक्षा था। आजादी के बाद जैसे-जैसे शिक्षा का विकास हुआ वैसे-वैसे आदिवासी समाज भी शिक्षित होने लगा तथा अपने समाज, संस्कृति और इतिहास के बारे में खुद लिखने लगा। परिणाम स्वरुप आदिवासी साहित्य आज हमारे सामने है।

आदिवासी अपने पूर्वजों की परंपरा को अपनाते हुए चले आ रहे हैं। आदिवासियों में अनेक जनजातियाँ शामिल हैं,जैसे-गोंड, काबरा, उराँव, मुंडा, संथाल, खड़िया आदि। इन जनजातियों की पहचान, उत्सव-त्यौहार, रहन-सहन, गीत-संगीत, नृत्य आदि समान नहीं है। केवल इतना ही नहीं समाज-संगठन, जीवन-मृत्यु संस्कार, नामकरण, विवाह पद्धति, पूजा-विधि आदि में भी अंतर है। इसी कारण हिंदी उपन्यासों में भी इन अनेकताओं का समावेश हुआ है। आदिवासी समाज और संस्कृति पर केन्द्रित अनेक उपन्यास लिखे गये हैं। आदिवासियों के इतिहास की बात करें तो उन्होंने अन्याय-अत्याचार के खिलाफ अनेक विद्रोह किये हैं, जिनका उल्लेख इतिहास में नहीं मिलता लेकिन साहित्यकारों ने इन घटनाओं का उल्लेख किया है। गहन अध्ययन और विश्लेषण के बाद हिंदी में चार ऐसे उपन्यास हैं जो आदिवासी विद्रोहों का सजीव चित्रण प्रस्तुत करता है। इसमें मधुकर सिंह का 'बाजत अनहद ढोल', राकेश कुमार सिंह का 'जो इतिहास में नहीं हैं' और 'हुल पहाड़िया' और हरिराम मीणा का 'धूणी तपे तीर'। पहले दो उपन्यास झारखण्ड के संथाल हूल पर आधारित हैं और तीसरा पहाड़िया विद्रोह पर आधारित है, चौथा राजस्थान के भील विद्रोह पर आधारित है।

'बाजत अनहद ढोल' मधुकर सिंह द्वारा रचित एक चर्चित उपन्यास है। इस उपन्यास की कथावस्तु झारखण्ड के संथाल हूल पर आधारित है। यह भारतीय इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना रही है। यह अंग्रेज सरकार की शोषण नीति के खिलाफ लड़ा गया एक सशक्त विद्रोह था, जिसमें बहुत संख्या में संथाल आदिवासी तथा अन्य जनजाति के लोग शामिल हुए थे। इस विद्रोह के प्रमुख नेता सिदो, कान्हू, चाँद, भैरव थे। सिदो ने 1855 में अपने गाँव भागनाडीह में अपने तीन भाईयों के साथ विद्रोह शुरू किया था। महाजनी शोषण, सरकारी भ्रष्टाचार, पुलिस के अत्याचार, जमींदारों की बेगारी इस विद्रोह का प्रमुख कारण था। इन सभी कारणों को दृष्टि में रख कर अपने समाज तथा संस्कृति को बचाने के लिए 1855 में राजमहल की पहाड़ियों में संथाल विद्रोह की शुरुआत हुई थी। इस विद्रोह का प्रमुख उद्देश्य था अंग्रेज सरकार की शोषण नीति का विरोध करना। इस के बारे में उपन्यासकार कहते हैं कि "सरकारी आदेश नहीं माने जायेंगे, लगान नहीं दी जायेगी, नील खेती नहीं होगी, 'दामन-ए-कोह' क्षेत्र में अपनी सरकार बनेगी और यह की अंग्रेजों को मार भगाना है।"[1] देखा जाए तो यह विद्रोह भारतीय स्वाधीनता संग्राम की नींव है जो आगे चल कर स्वाधीनता संग्राम में मिल गया। अतः यह कहा जा सकता है कि भारतीय स्वाधीनता संग्राम में आदिवासियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

'जो इतिहास में नहीं है' राकेश कुमार सिंह द्वारा रचित एक चर्तित उपन्यास है। इस उपन्यास की कथावस्तु भी झारखण्ड के संथाल हूल पर आधारित है जो 'बाजत अनहद ढोल' उपन्यास का विस्तृत रूप है। संथाल हूल भारतीय स्वाधीनता संग्राम का प्रथम सशक्त विद्रोह था, जिसमें हजार-हजार संख्या में आदिवासी तथा गैर-आदिवासी शामिल हुए थे। इसके प्रमुख नेता सिदो, कानू, चाँद, भैरव थे। इन चारों भाइयों के नेतृत्व में 1855 ई. में अंग्रेज सरकार की शोषण नीति के खिलाफ विद्रोह किया गया था। यह विद्रोह केवल आदिवासियों का ही नहीं बल्कि अन्य समाज के लोगों का भी था जो अंग्रेज सरकार की शोषण नीति के शिकार थे। अपने अस्तित्व,अस्मिता, संस्कृति को बचाने के लिए यह एक प्रमुख जन आन्दोलन था। जिसको अंग्रेज सरकार ने अपने आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों के माध्यम से कुचल दिया था। जिसमें सिदो, कानू समेत हजारों आदिवासी शहीद हुए थे। इस घटना का उल्लेख इतिहास में कहीं नहीं मिलता। इसी को दृष्टि में रख कर उपन्यासकार ने उपन्यास का नाम 'जो इतिहास में नहीं है' रखा है। इससे स्पष्ट होता है कि उपन्यासकार ने इतिहास की उपेक्षित घटनाओं को कथा का आधार बनाया है। उपन्यासकार ने लम्बे समय के शोध तथा परीक्षण-निरीक्षण के पश्चात घटनाओं को एक क्रम में रखने का प्रयास किया है, इसमें इन्होंने यह साबित करने का प्रयास किया है कि यह स्वाधीनता संग्राम की पूर्वपीठिका है।

जो इतिहास में नहीं है' उपन्यास में उपन्यासकार ने शोषण के विविध आयामों तथा उनके प्रतिरोध में उठती चिंगारियों और उस दौर के संथाल समाज की हलचलों का सजीव चित्रण किया है। राजमहल क्षेत्र के संथाल नायकों की 'अबुआ राज' के सपने को साकार करने के सफल प्रयास को दिखाया गया है। साथ ही अंग्रेज सरकार की 'फूट डालो राज करो' नीति और आदिवासियों को अमानवीय रूप से कुचलने का सजीव चित्रण किया है। अंग्रेज सरकार ने स्थानीय जमींदारों के माध्यम से आदिवासियों से ज्यादा-से-ज्यादा लगान वसूलती थी। जमींदार आदिवासियों को अपनी बेगार बना के रखते थे। उपन्यास का एक पात्र हरिल मुरमू है जो राजा गोमके की बेगार बन कर अत्याचार सहता आ रहा है। उसके बाद उसका बेटा राजा की बेगार बनता है। अर्थात यह एक प्रथा के रूप में प्रचलित थी। यह केवल हरिल मुरमू की व्यथा नहीं है बल्कि पूरे आदिवासी समाज की व्यथा है। जो भी उनका विरोध करता है उसको और भी कठोर दण्ड दिया जाता है। उसे उपन्याकार ने भौरा भगत नामक एक पात्र के माध्यम से दिखाया है। राम मुण्डा स्थानीय जमींदार, महाजन, पुलिस आदि लोगों को विरोध कर रहा था। जमींदार राजा गोमके ने उसे कठोर दण्ड दिया हैं "दहडता भौरो भगत राम मुंडा को मरता रहा। आँख, कान, नाक, मुंह...देह के हर छिद्र से रक्त फूटने तक...। राम मुंडा अचेत होने लगा था। इन्द्रिय पर से नियंत्रण खोते राम मुंडा के मल-मुत्र की दुर्गंध से नाक फटने लगी तभी भौरो भगत के हाथ रुके थे।"[2] इस तरह से सत्ताधारी लोग आदिवासियों का अत्याचार कर रहे थे। इन सारी अत्याचारोंअ और शोषण के खिलाफ आदिवासियों ने मिलकर विद्रोह किये थे।

'धूणी तपे तीर' हरिराम मीणा द्वारा रचित एक ऐतिहासिक उपन्यास है। इस उपन्यास की कथावस्तु राजस्थान के भील विद्रोह पर आधारित है, जिसके प्रमुख नेता गोविन्द गुरु थे। इस विद्रोह को 'गोविन्द गिरी भील विद्रोह' के नाम से भी जाना जाता है। यह एक सामाजिक आन्दोलन के रूप में शुरू हुआ था। इसका प्रमुख उद्देश्य आदिवासी समाज में प्रचलित अंधविश्वास तथा बुराईयों को ख़त्म करना था, इसलिए गोविन्द गुरु ने 'संप सभा' की स्थापना की। यह सभा हर गाँव में स्थापित करके लोगों को उपदेश तथा शिक्षा देने लगे जिसके फलस्वरूप आदिवासी समाज शिक्षित तथा संगठित होने लगा। लोगों में जागरूकता आई। उनकी जागरूकता को देख कर अंग्रेज सरकार को झटका लगा। अंग्रेज सरकार को डर था कि कहीं एक दिन उनके खिलाफ विद्रोह न कर दें। अंग्रेज सरकार का शक सही निकला, एक दिन गोविन्द गुरु के आह्वान से सारे आदिवासी मानगढ़ की पहाड़ी पर इकट्ठे हुए थे। आदिवासियों की इस महासभा को असफल बनाने के लिए गोली चलाई जिसमें अनेक आदिवासी मारे गए। यह एक बर्बर हत्या कांड था। इसके बारे में खुद उपन्यासकार लिखते हैं "देश का पहला जलियाँवाला कांड अमृतसर(1919) से छः वर्ष पूर्व दक्षिणी राजस्थान के बाँसबाड़ा जिले के मानगढ़ पर्वत पर घटित हो चुका था, जिसमें जलियाँवाला से चार गुणा शहादत हुई।"[3] इतनी बड़ी घटना को इतिहासकारों ने अनदेखा किया लेकिन हरिराम मीणा ने खोजी तथ्यों के आधार पर इस घटना को एक उपन्यास का रूप दिया।

'हुल पहाड़िया' राकेश कुमार सिंह द्वारा रचित एक ऐतिहासिक तथा जीवनी परक उपन्यास है। इस उपन्यास की कथावस्तु पहाड़िया विद्रोह पर आधारित है। यह विद्रोह 1784 ई. में अंग्रेज सरकार के खिलाफ किया गया प्रथम विद्रोह था। इस विद्रोह के प्रमुख

नेता तिलका माँझी थे, जो अंग्रेजों के खिलाफ लड़ कर शहीद हुए थे। ये भारत के प्रथम व्यक्ति थे जिनको अंग्रेज सरकार ने फाँसी की सजा दी थी। लेकिन उनके इस संघर्ष तथा बलिदान का उल्लेख इतिहास में कहीं नहीं मिलता जबकि वे उसके हक़दार थे। उनकी शौर्य गाथाओं का उल्लेख केवल आदिवासियों की लोक कथाओं में है। जब भी हम स्वाधीनता संग्राम की बात करते हैं तो हम स्वाधीनता संग्राम का आरंभ 1857 की क्रन्ति से मानते हैं। लेकिन इससे 100 साल पहले झारखंड के पहाडिया लोगों ने अपने स्वंतत्रता के लिए कम्पनी सरकार की शोषण नीति का विरोध किया था। इसका उल्लेख कहीं नहीं मिलता। राकेश कुमार सिंह ने उसी उपेक्षित घटना को आधार बना कर 'हुल पहाड़िया' की रचना की है। उपन्यास का नायक तिलका माँझी पहाड़िया विद्रोह के प्रमुख नेता थे, इनके नेतृत्व में पहाड़ियाओं ने सबसे पहले अंग्रेज सरकार की साम्राज्यवादी नीति का विरोध किया था। अंग्रेज सरकार के शोषण नीतियों से अपने समाज को बचाने के लिये उन्होंने अस्त्र-सस्त्र उठाये थे। उन्होंने अपने पारंपरिक अस्त्र तीर-धनुष के माध्यम से अंग्रेजों के गोलियों का सामना किया था| तिलका को अंग्रेज सरकार ने फाँसी की सजा दी थी। देश के लिए इतना बड़ा बलिदान के बावजूद भी इनका उल्लेख इतिहास में नहीं मिलता, ये हमारी इतिहासकारों के चालाकी है। तिलका माँझी शोषण अत्याचार के खिलाप लड़ते-लड़ते शहीद हुए इसलिए उनके द्वारा चलाया गया संघर्ष का मार्ग को अपनाते हुए आगे ओर भी बड़े-बड़े विद्रोह हुए हैं जैसे, संथाल हुल, भूमिज विद्रोह, मुंडा विद्रोह आदि। शोषण के खिलाफ आदिवासियों ने हमेशा आवाज उठाते आये हैं लेकिन उनके आवाज को हमेशा दबाया गया है।

इतिहास हमें अतीत के घटनाओं के बारे में जानकारी देता है। अगर हम हिंदी साहित्य के इतिहास और भारत के इतिहास की बात करें तो दोनों ही अपूर्ण या अधूरे लगते हैं। भारत के इतिहास को देखें तो पता चलता है कि अनेक ऐसी घटनाएँ है जिनको इतिहास में स्थान नहीं दिया गया। इस सन्दर्भ में हम 'भारतीय स्वाधीनता संग्राम' को देख सकते हैं। जब भी स्वाधीनता संग्राम की बात आती है तो, हम स्वाधीनता संग्राम का आरम्भ 1857 के सिपाही विद्रोह से मानते हैं। लेकिन इससे सौ साल पहले 1750 में झारखण्ड के आदिवासियों ने अंग्रेजों का विरोध किया था, लेकिन इसकी ओर किसी का नजर नहीं जाता। क्योंकि उसका उल्लेख इतिहास में कहीं नहीं मिलता। आदिवासियों ने अंग्रेजों के खिलाप अनेक छोटे-बड़े विद्रोह किये हैं लेकिन उन सबको इतिहासकारों ने जानबूझ कर वह स्थान नहीं दिया जिसका वे हक़दार थे। आज आदिवासी समाज शिक्षित होने के कारण खुद अपने समाज, संस्कृति और इतिहास के बारे में लिख रहा है। जिसके परिणाम स्वरूप आदिवासी साहित्य आज हमारे सामने है। आदिवासी साहित्य आज विश्व के अनेक भाषाओं में लिखा जा रहा है। अगर हम भारत की बात करें तो यहाँ पर भी अनेक भाषाओं में लिखा जा रहा है। आदिवासी समुदाय भारत का एक प्राचीन समुदाय है, जिनका इतिहास भी बहुत पुराना है। केवल इतिहास ही नहीं बल्कि उनके साहित्य का भी एक लंबी परंपरा रही है,जिसे हम लोक साहित्य,लो कगीत,लोक कहानी आदि के माध्यम से देख सकते हैं।

आदिवासी समुदाय को आज प्राकृतिक संसाधनों पर अपने पारंपरिक अधिकारों के लिये लगातार संघर्ष करना पड़ रहा है। जल, जंगल, जमीन को उनकी जीविका का एक मात्र सहारा था जिसके अधिकार के लिए उन्हें अस्तित्व की लड़ाई लड़नी पड़ रही है। औद्यागिक क्रांति जहाँ अन्य समाज के लिए समृद्धि के नए द्वार खोल रही है, वहीं आदिवासियों के लिए विस्थापन और पलायन का दंश लेकर आयी है। पहले यहाँ दिकू लोग बहला-फुसला कर उनकी जमीन हड़प लिया करते थे, अब सरकार और कॉरपोरेट घराने उन्हें उनकी जमीन से बेदखल करने के अभियान में लगे हैं। उनकी उदारता और भोलेपन का लाभ सरकारी और गैर-सरकारी लोग भरपूर उठा रहे हैं। उनके खिलाप आदिवासियों के विद्रोह आज भी चल रहे हैं।

संदर्भ सूची

1. बाजत अनहद ढोल दृ मधुकर सिंह ए पृष्संण 8
2. जो इतिहास में नहीं है दृ राकेश कुमार सिंहए पृष्संण 108
3. धूणी तपे तीर. हरिराम मीणाए पृष्संण20